Sanskritik aur Samajik Anusandhan
www.shodhjournal.com
ISSN: 2582-5852
Received: 15-03-2022, Accepted: 01-04-2022, Published: 16-04-2022
Volume 3, Issue 1, 2022, Page No. 15-17

लोक जागरण और रामानन्दीय परम्पराः एक अध्ययन

कुमार रत्नम, अंजलि रत्नम
[1] सदस्य सचिव, भारतीय इतिहास अनुसंधान परिषद् शिक्षा मंत्रालय, नई दिल्ली, दिल्ली, भारत
[2] शिक्षा शास्त्र विभाग, गौतम बुद्ध विश्वविद्यालय, गौतम बुद्ध नगर, नोएडा, उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश
भारतीय परम्परा में भक्ति और ज्ञान का अद्भूत संयोग देखने को मिलता है , हमारी श्रेष्ठ परम्परा को समय–समय पर ऋषियों ने निरंतर नए रूप में प्रस्तुत कर भारतीय संस्कृति को पुनर्नावित करने का कार्य किया है ।इसी ऋषि परम्परा में रामानन्द का नाम इस अर्थ में विशिष्ठ है कि उन्होंने भारतीय लोक मानस को जागृत करने की दिशा में प्रयास किया। रामानुजाचार्य के शिष्य रामानन्द ने भक्ति और ज्ञान की ऐसी गंगा बहायी जिसमें समग्र भारत एक सूत्र में बंध गया , और भक्ति सम्पूर्ण भारत में प्रवाहित होने लगी।
भारतीय चेतना की अजस्र धारा अत्यन्त निरन्तर रूप से भारत के स्व का वहन करती रही है। समय–समय पर इस अजस्र धारा के प्रवाह में गति शून्यता ने हमारी संस्कृति एवं सभ्यता को प्रभावित भी किया, लेकिन भारत के वैभवशाली प्रवाह ने समस्त अवरोधों को पार कर हमारे स्व को नयी चेतना और स्फूर्ति से जागृत करने का कार्य करती रही है। भारतीय चेतना की सर्वाधिक महत्वपूर्ण विशेषता इसकी ग्रहणशीलता और उदारता है। ग्रहणशीलता की उदारता के साथ–साथ स्व की चेतना का सर्वोत्तम उदाहरण भारतीय भक्ति परम्परा में हम देख सकते हैं। हमारी भक्ति परम्परा में नाना प्रकार की साधना पद्धतियों का अनुस्यूतन हमारी सनातन जीवन पद्धति का अभिन्न अंग बन चुकी है।

मूल शब्दः भक्ति, लोक मानस, सनातन, उदारता, ग्रहणशीलता

प्रस्तावना
भक्ति की एक विस्तीर्ण परम्परा हिन्दी एवं हिन्दीत्तर क्षेत्र में देखने को मिलती है, जिसे हिन्दी साहित्य में लोक जागरण काल या भक्ति काल की संज्ञा दी गई है। भाषाई विविधता, सांस्कृतिक एकता और भक्ति के विविध मार्गो का समुच्चय होने के कारण इस लोक जागरण को हिन्दी में स्वर्णयुग भी माना जाता है। लोक जागरण का जो प्रबल प्रवाह हिन्दी साहित्य में देखने को मिलता है, वह प्राचीन भारत की मूल भावना रही है। इस सन्दर्भ में 'लोक जागरण और हिन्दी साहित्य' की भूमिका में राम विलास शर्मा ने लिखा है कि – ''धर्म की भावात्मक अनुभूति या भक्ति, जिसका सूत्रपात महाभारत काल में और विस्तृत प्रवर्तन पुराण काल में हुआ, कभी कहीं दबती, कभी कहीं उभरती, किसी प्रकार चली भर आ रही थी। भक्त कवि दबी हुई भक्ति को जगाने लगे। भक्ति की शुरूआत न हुई थी, उसका प्रसार हुआ था। क्रमशः भक्ति का प्रवाह ऐसा विस्तृत और प्रबल होता गया कि उसकी लपेट में केवल हिन्दू जनता ही नहीं, देश में बसने वाले सहृदय मुसलमान में से भी न जाने कितने आ गए।''[1]
भक्ति काल ने भारतीय सनातन परम्परा की लौ को एक बार फिर से जागृत करने की दिशा में महत्वपूर्ण कार्य किया। जार्ज ग्रियर्सन ने भक्ति के महत्व को रेखांकित करते हुए लिखा है कि 'अचानक बिजली के समान यह बात भारतीय अन्तरीय के इस छोर से उस छोर तक चमक गई। परन्तु इसके मेघ चार सौ वर्ष से मेघ पुंजीभूत हो रहे थे।'' इसे स्पष्ट करते हुए 'आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी' ने अपनी पुस्तक 'हिन्दी साहित्यः उसका उद्भव और विकास' में लिखा है– ''असल बात है कि जिस बात को ग्रियर्सन ने अचानक बिजली की चमक के समान फैल जाना लिखा है, सामान्यतः यह बात है कि इसके लिए कई सौ वर्ष से मेघखण्ड एकत्र हो रहे थे।''[2]
हिन्दी साहित्य में जो भक्ति की सुदृढ़ परम्परा दृष्टिगत होती है, वह हमारी प्राचीन विरासत के स्व की चेतना उद्दाम् प्रवाह है। हिन्दी साहित्य में लोक को केन्द्र में रखकर भक्ति काल में विपुल साहित्य लिखा गया। इसमें समाज के सभी वर्गो के लोगों के लिए भक्ति का मार्ग प्रशस्त हुआ। रामानुजाचार्य की शिष्य परम्परा में आने वाले रामानन्द के शिष्य कबीरदास ने लोक जागरण की दिशा में अदम्य साहस का परिचय दिया। कबीरदास मूलतः लोक चेतना के आदि वाहक हैं, जिन्होंने लोक की व्यापक भूमि पर अपने विचारों का प्रसार किया और भारतीय स्व की चेतना को लोक में स्थापित किया। कबीरदास ने लोक–जागृत के जिन विचारों का प्रणयन किया, उसकी प्रासंगिकता आज भी बनी हुई है।
कबीरदास सच्चें अर्थो में लोक चेतना के संत थे। एक ऐसा संत जो सबसे बेपरवाह होकर अलमस्त भाव से धार्मिक एवं सामाजिक एकता की दिशा में अपना सब झोंककर लोगों को जगाने में दिन–रात व्यस्त थे। कबीरदास के भाव और भाषा लोक के प्रांगण में ही विकसित हुई है। कबीरदास की भाषा के सन्दर्भ में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने जो कहा है वास्तव में उनके व्यक्तित्व पर पूर्णता में बैठता है। ''भाषा पर कबीर का जबरदस्त अधिकार था। वे वाणी के डिक्टेटर थे। जिस बात को उन्होंने जिस रूप में प्रकट करना चाहा है उसे उसी रूप में भाषा से कहलवा लिया बन गया तो सीधे–सीधे, नही तो दरेरा देकर। भाषा कुछ कबीर के सामने लाचार–सी नजर आती है। उसमें मानो ऐसी हिम्मत ही नहीं है कि इस लापरवाह फक्कड़ की किसी फरमाइश को नही कर सकें और अकह कहानी को रूप देकर मनोग्राही बना देने की तो जैसी ताकत कबीर की भाषा में है वैसी बहुत कम लेखकों में पाई जाती है। असीम–अनंत ब्रह्मानंद में आत्मा

का साक्षीभूत होकर मिलना कुछ वाणी के अगोचर, पकड़ में न आ सकने वाली ही बात है। पर 'बेहद्दी मैदान में रहा कबीरा' में न केवल उस गंभीर निगूढ़ तत्व को मूर्तिमान कर दिया गया है, बल्कि अपनी फक्कड़ाना प्रकृति की मुहर भी मार दी गई है।''[3]

कबीरदास का लोकानुभव ही है कि उनकी वाणी ने निर्गुण निगूढ़ तत्वों को आमजन में स्थापित सहजभाव से प्रतिष्ठित किया। इस दृष्टि से वे भारतीय लोक जागरण के एक ऐसे अवधूत हैं जिन्होंने स्वभाव को सहज रूप से प्रतिष्ठित किया और नाथों, सिद्धों के दुरूह मर्म को लोक जगत में प्रवाहित किया। कबीर, तुलसी और सूरदास इन तीनों संतो ने भक्ति से जनमानस को सिर्फ जोड़ा वरन् भारतीय सनातन परम्परा को अपने–अपने ढंग से लोक जगत में स्थापित भी किया। रामचरित मानस मध्यकाल का श्रेष्ठ ग्रन्थ है, आज भी रामचरित मानस लगभग सभी सनातन धर्मी लोगों के घरों में पायी जाती है। रामचरित मानस देश और काल की सीमा पार करके समस्त संसार के सहृदयों को प्रभावित करने में समर्थ है। भारतवर्ष की साधना का जो सर्वोत्तम है, जो कुछ महान है, जो कुछ सरस है और जो कुछ भव्य है, वह इस बहाने अभिव्यक्ति पाने को व्याकुल हो उठा। इस उदात्त भव्य अभिव्यक्ति में ही रामचरित मानस की महिमा है।''[4]

राम हमारे दैनिक जीवन के अनुभवों के भीतर से ही उत्पन्न हुए हैं। वह केवल अनादि, अनन्त और व्यापक सच्चिदानन्द मात्र नही है, बल्कि शील, सौजन्य, मर्यादा के अधिष्ठाता हैं। राम का चरित्र आज भी हमारे अस्मिता से जुड़ा हुआ है। कबीर और तुलसी दोनों राम के परम भक्त हैं। भारतीय जनमानस में राम और उनके विविध अवतार गहरे बैठे हुए हैं। इनमें राम और कृष्ण का व्यक्तित्व सर्वाधिक लोकप्रिय और प्रेरक है। इन अवतारों में शक्ति, शील और सौन्दर्य तीनों की चरम अभिव्यक्ति एक साथ समन्वित होकर मनुष्य के सम्पूर्ण हृदय को आकर्षित कर लेती है। और आकर्षण भारतीय लोक के हृदय में आत्मबोध की चेतना को प्रतिष्ठित कर रहा था। रामचरित मानस के उद्देश्य के बारें में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लिखा हैं कि – ''व्यक्ति के समष्टि चेतना के साथ निमज्जित होने की प्रक्रिया का ऐसा हृदयग्राही वर्णन दुर्लभ हैं–शायद अलंभ्य।''(सूर साहित्य)

रामचरित मानस के संत कवि गोस्वामी तुलसीदास का रचना कौशल और उनकी रचनाओं में लोक की भावुकता का मर्म देखते ही बनता है। तुलसी, सूर, कबीर ये तीनों लोक हृदय में लीन होकर अपने भावों को सर्वोच्च शिखर पर पहुँचाते हैं। हिन्दी के भक्त कवियों ने भारतीय सनातन चिन्तन को लोक भाषा में रचकर ऐतिहासिक दायित्व का निर्वाह किया। लोक भाषा में लोक रंजक व्यक्तित्व की प्रस्तुति इन संतो की सर्वाधिक महत्वपूर्ण विशेषता है।

भक्तिकालीन अधिकांश साहित्य संत कवियों द्वारा न सिर्फ रचा वरन् भक्त कवियों ने लोगों के बीच जाकर अलख जगाया और उनको समृद्ध भारतीय सनातन परम्परा से भी जोड़ने का कार्य किया। सूर, कबीर, तुलसी के साथ–साथ अनेकानेक भक्त कवियों ने सम्पूर्ण भारत में अपनी–अपनी भाषा में लोक को जगाने के कार्य में रत रहे। भक्ति भावना का उदय उत्तर भारत से पल्लवित होने के पूर्व दक्षिण भारत में अपना निर्माण कर चुकी थी। यह भावना वैष्णव धर्म से उद्भूत हुई थी। वैष्णव धर्म का आदि रूप हमें विष्णु के देवत्व की प्रधानता में मिलता है। विष्णु का निर्देश हमें पहले ऋग्वेद में मिलता है। विष्णु (विश धातु) व्याप्त होना है। इसी तरह राम शब्द का अर्थ है – 'रमन्ते इति रामः'। इस दृष्टि से राम और विष्णु दोनों अपने मूल रूप में एक ही है। हमारी सनातन परम्परा का आदि ग्रन्थ ऋगवेद हैं ऋग्वेद में विष्णु को सौर शक्ति के रूप में मान्यता दी गयी है। सूर्य सम्पूर्ण सृष्टि में अपने प्रकाश के रूप में व्याप्त है, इसलिए सूर्य का रूप विष्णु ही है।[5]

ऋग्वेद हमारी सनातन परम्परा का मूल आधार है। और इसमें प्राकृतिक घटकों को ही दैवीय शक्ति के रूप में स्वीकार किया गया है। लोक जागरण काल इसलिए भी विशिष्ट है कि इस काल में भक्ति को सहज रूप में प्रस्तुत किया गया और साथ ही साथ भक्ति मार्ग समाज के सभी वर्गो के निमित्त खोला गया। कबीरदास जी कहते है–

जाति पाँति पुछे नहीं कोई,
हरि को भजै, सो हरि का होई।

कबीरदास ही नहीं वरन् संत परम्परा के लगभग सभी संतो ने जाति स्तरीय समानता की दिशा में लोगों को एक साथ लाने के लिए व्यापक प्रयास किया। संत परम्परा का विकास रामानन्द के प्रयासों से ही हुआ है। इसे रेखांकित करते हुए डॉ0 रामकुमार वर्मा ने लिखा है कि– ''रामानन्द ने ही अपनी स्वतंत्र भक्ति से कबीर आदि महात्माओं को जन्म दिया, जिन्होंने संत साहित्य की स्थापना की। रामानन्द से पहले दक्षिण में नामदेव और त्रिलोचन तथा उत्तर में सदन और बेनी की रचनाओं में भी भक्ति का बड़ा परिष्कृत रूप रखा, जिसमें ईश्वर केवल मूर्ति में ही सीमित न होकर विश्व में व्यापक हो गया।[6]

इस दृष्टि से देखें तो हमें यह स्पष्ट हो जाता हैं कि लोक जागरण काल के संतो और भक्तों द्वारा समाज सुधार और लोगों में आत्मभाव जागृत करने का कार्य किया गया। संत साहित्य के विस्तार के अपने निश्चित कारण हैं, जो निम्नलिखित है–

रामानन्द ने जाति–बन्धन ढीला कर दिया था। उन्होंने अनेक जाति के जिज्ञासुओ को एक ही पंक्ति में लाकर खड़ा कर दिया।

उन्होंने धर्म–प्रसार के लिए संस्कृत की उपेक्षा कर जनता की भाषा को ही प्रश्रय दिया। यद्यपि रामानन्द की हिन्दी–रचना बहुत ही कम है, तथापि उन्होंने अपने शिष्यों को भाषा में धर्म–प्रचार की आज्ञा दे दी थी।

रामानन्द ने ईश्वर के वर्णन में अद्वैतवाद में प्रयुक्त ईश्वर के नामों का उपयोग किया है। उन्होंने राम की साकार उपासना को सुरक्षित रखते हुए भी अद्वैतवाद की ईश नामावली को स्वीकार किया है।

शंकराचार्य के सन्यासियों से रामानन्द के अवधुतों की आचारात्मक स्वतंत्रता बहुत अधिक है।

सच्चें अर्थो में कहें तो रामानन्द एक ऐसे आध्यात्मिक गुरू है जिन्होंने भक्ति को लोक में न सिर्फ प्रतिष्ठित किया वरन् सामाजिक समरसता की एक ऐसी धारा का प्रवाह आरम्भ किया, जो आज भी हमें आलोकित करती है। रामानन्द की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उन्होंने जाति–बन्धन के महत्व को व्यर्थ सिद्ध कर दिया। उन्होंने भक्ति की सर्वोत्कृष्टता सिद्ध कर प्रत्येक जाति के लिए वैष्णव धर्म का दरवाजा खोल दिया। उन्होंने भक्ति और ज्ञान प्राप्ति के लिए सामाजिक बन्धन को तुच्छ सिद्ध कर दिया। उनके प्रमुख शिष्य है– अनन्तानन्द, सुरेश्वरानन्द, नरहरियानन्द, योगानन्द, भावानन्द,

पीपा, सेन घना, रैदास, कबीर, गालवानन्द इत्यादि। रामानन्द ने अपने स्वतंत्र विचारों से विभिन्न जातियों के अनेक भक्तों को अपना शिष्य बनाया।[7]

लोक जागरण और भारतीय स्वजागरण एक दूसरे से बहुत ही गहरे स्तरों पर जुड़े हुए हैं। जागरण की परम्परा अत्यन्त प्राचीन काल से चली आ रही है। समय प्रवाह में जब भी हमारा सनातन समाज अपने उच्च आध्यात्मिक मूल्यों से विरत हुआ है, तब हमारे ही बीच से जागरण का पुंज हमारी स्व की चेतना से हमें न सिर्फ परिचित कराया वरन् हमारे समाज को जोड़ने और हमारे उत्थान के निमित्त अथक प्रयास भी किया है। वैदिक काल से लेकर आज तक की हमारी चेतना के उत्थान एवं जागरण में हमारी सनातन परम्परा की वह विशेषता रही है, जिसके कारण विश्व की विविध जातियों एवं धर्मो के लोग यहीं के होकर रह गये है। यही हमारे दर्शन एवं चिन्तन की विशिष्टता भी है कि यहाँ–ऐकेश्वरवाद के साथ–साथ बहुदेववाद, अद्वैतवाद के साथ–साथ द्वैतवाद, विशिष्टताद्वैतवाद जैसे अनेकता होते हुए हम मूल में एक ही है। जो बाह्य शक्तियाँ यहाँ की न हो पायी, उसे यहाँ के लोगों की एकजुटता के समक्ष पराजित होकर यहाँ से जाना पड़ा।

भारतीय सनातन परम्परा की चेतना का अजस्र प्रवाह नवजागरण से लेकर आज तक देखने को मिलता है। आज भी कबीर का निर्गुण, तुलसी कृत रामचरित मानस और सूरदास के पद ब्रज क्षेत्रों में सिर्फ गाये और सुने जाते हैं, वरन् लोक मानस में बड़े ही श्रद्धा भाव से अनुकरण किये जाते हैं। भारतीय स्व की चेतना जागृत करने के लिए लोक जागरण काल ने जो लौ जलायी उसके प्रकाश में ही नवजागरण काल के रचनाकारों ने समाज सुधार और हमारी स्व की चेतना को पुनः व्यापक स्तर पर स्थापित करने की दिशा में महत्वपूर्ण कार्य किया। भक्ति की जिस धारा का प्रवाह रामानन्द और उनके शिष्यों ने आरम्भ किया था उसका नवीन और समाज्जोन्नमुख स्वरूप आधुनिक काल में विकसित करने का कार्य हिन्दी पत्र–पत्रिकाओं के माध्यम से किया। राम और कृष्ण का जीवन आज भी हमारे साहित्य का उपजीव्य बना हुआ है। वैदिक कालीन संस्कृति और जीवन पद्धति के पुर्नस्थापन का कार्य समय–समय पर भारतीय मनीषियों ने किया है। जिसमें रामानुजाचार्य के शिष्य रामानन्द का विशेष स्थान है। रामानन्द के शिष्यों ने पूरे भारत में घूम–घूम कर अलग–अलग बोली एवं बानियों के माध्यम से भक्ति का अखिल भारतीय स्वरूप निर्मित किया। आदि गुरू शंकराचार्य ने भारत के चारों कोने में चारो धामों को स्थापित कर जिस सनातन परम्परा का आरम्भ किया था, उसे रामानुजाचार्य और रामानन्द ने लोक के बीच में लोक की भाषा के माध्यम से स्थापित किया। जिसके आलोक से आज भी हमारा समाज आलोकित हो रहा है। लोक नायक राम और कृष्ण के लोक रंजक व्यक्तित्व को वेदों, उपनिषदों से निकालकर आम–जन के जीवन का हिस्सा बनाने में लोक जागरण काल के संतो का विशेष योगदान है। इन संत कवियों की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इन्होंनें समाज के सभी वर्गो के लिए भक्ति का द्वार खोल दिया और इसका श्रेय रामानन्द को ही है। रामानन्द ही ऐसे आचार्य है, जिन्होंने स्वयं समाज के सभी वर्गो के लोगों को अपना शिष्य बनाया। उनके शिष्यों में सर्वाधिक लोकप्रिय और समाज सुधारक कबीर दास का व्यक्तित्व आज भी अनुकरणीय है। जिन्हें दीक्षित कर रामानन्द ने ऐतिहासिक दायित्व का निर्वाह किया।

रामानन्द रामानुजाचार्य की परम्परा में आने वाले एक आचार्य हैं, जिन्होंने भक्ति के दो रूपों सगुण भक्ति और निर्गुण भक्ति का प्रसार किया। रामानन्द ने शिष्य परम्परा में ही हिन्दी के भक्त कवियों की वाणी अनुगूँज आज भी सुनी एवं गायी जाती है। जिसमें कबीर एवं तुलसी का महत्व सर्वविदित है।

संदर्भ

1. लोक जागरण और हिन्दी साहित्यः रामविलास शर्मा, भूमिका, 2021।
2. हिन्दी साहित्यः उसका उद्भव और विकास; हजारी प्रसाद द्विवेदी पृष्ठ–307।
3. कबीरः हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ–170।
4. लोक जागरण और हिन्दी साहित्यः रामविलास शर्मा पृष्ठ–48।
5. अतो देव अवंतु नो यतो विष्णुविचक्रसे
6. पृथिव्याः सप्त धामभिः।।6।। (ऋग्वेद संहिता–सायणाचार्य) –
7. डॉ0 मैक्स मूलर
8. हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहासः डॉ0 रामकुमार वर्मा पृष्ठ–211, (लोक भारतीय प्रकाशन, इलाहाबाद, 2017)
9. एन0 आउटलाइन ऑफ दि रिलीजस लिटरेचर आफ इंडिया (जे0एन0 फर्कहार) पृष्ठ–325।